आई.एल.आर. पंजाब और हरियाणा
(184-196)

मुख्य न्यायमूर्ति बी.सी. वर्मा और न्यायमूर्ति अशोक भान *के समक्ष*

हरद्वारी लाल, पूर्व सांसद (लोकसभा), -याचिकाकर्ता

बनाम

चौधरी भजन लाल, मुख्यमंत्री, हरियाणा, चंडीगढ़ और अन्य, - प्रतिवादी

1991 की सिविल रिट याचिका संख्या 16144

-11 फरवरी 1992

भारत का संविधान, 1950- अनुच्छेद 226, 155, 156, 163, 164, 190 से 193 - मुख्यमंत्री का कार्यालय - अयोग्यता के तरीके - आनंद का सिद्धांत - मुख्यमंत्री का राज्यपाल की इच्छा पर पद धारण करना - मुख्यमंत्री द्वारा शपथ के उल्लंघन का आधार - अपील जनहित याचिका के माध्यम से उच्च न्यायालय के रिट क्षेत्राधिकार का -यथास्थिति रिट जारी करने को चुनौती - *अनुच्छेद 226 के तहत न्यायालय को अयोग्यता के अनुच्छेद 191 के तहत आधार जोड़कर मुख्यमंत्री को हटाने के लिए कोई निर्देश जारी करने का कोई अधिकार क्षेत्र नहीं है*- मंत्री के रूप में शपथ का उल्लंघन न तो संविधान के तहत और न ही संसद द्वारा बनाए गए किसी अन्य कानून के तहत, अयोग्यता नहीं है - केवल राज्यपाल संविधान के तहत नियुक्ति प्राधिकारी है , वह इस बात पर विचार कर सकता है कि क्या वास्तव में शपथ का कोई उल्लंघन हुआ है - ऐसे मामले जो पूरी तरह से नियुक्ति प्राधिकारी के आनंद सिद्धांत पर निर्भर और निरंकुश विवेक के दायरे में हैं, अनुच्छेद 226 के तहत उच्च न्यायालय के अधिकार क्षेत्र में नहीं आते हैं।

यह अभिनिर्णीत किया गया कि उच्च न्यायालय शपथ का उल्लंघन करने के लिए मुख्यमंत्री को हटाने के लिए अधिकार वारंट या किसी अन्य प्रकार की रिट या निर्देश जारी करने में सक्षम नहीं है।

अब यह अच्छी तरह से तय हो गया है कि जब कोई पद या कार्यालय आनंद सिद्धांत पर निर्भर होता है तो कोई अधिकार-पत्र जारी नहीं किया जा सकता है। एक बार जब कोई व्यक्ति कानूनी रूप से किसी कार्यालय में प्रवेश करता है और कानूनी रूप से इसे धारण करने का हकदार होता है और निरंतरता-आनंद सिद्धांत पर निर्भर करती है, तो वारंटो की रिट जारी करने की अनुमति नहीं होगी। इसका कारण यह है कि इस तरह के रिट को कार्यपालिका की इच्छा से तुरंत और आसानी से पराजित किया जा सकता है क्योंकि वह ऐसे व्यक्ति को फिर से उस कार्यालय को संभालने की अनुमति देने के लिए खुला होगा।

(पैरा 15)

आगे अभिनिर्णीत किया गया कि नियुक्ति प्राधिकारी राज्यपाल होने के नाते, वह ही इस पर विचार कर सकता है कि क्या वास्तव में शपथ का कोई उल्लंघन हुआ था। किसी मंत्री का कार्यकाल समाप्त करना न्यायालय का कार्य नहीं है।

(पैरा 14)

आगे अभिनिर्णीत किया गया कि यह महत्वपूर्ण है कि संविधान किसी मंत्री द्वारा शपथ के उल्लंघन के परिणामों के बारे में कोई स्पष्ट प्रावधान नहीं करता है। उस घटना में, जैसा कि हमने ऊपर उल्लेख किया है, अपनाया जाने वाला एकमात्र रास्ता संविधान के अनुच्छेद 192 के तहत दर्शाया गया है। नतीजतन, हमारी राय है कि प्रतिवादी मुख्यमंत्री द्वारा शपथ का कथित उल्लंघन/उल्लंघन, जो निर्धारित शपथ लेने पर उस पद पर रहने के लिए योग्य था, ने उसे मुख्यमंत्री के पद पर बने रहने के लिए अयोग्य नहीं ठहराया है।

(पैरा 12 एवं 13)

आगे अभिनिर्णीत किया गया कि संविधान के अनुच्छेद 191 और 192, विधान सभा के सदस्य की अयोग्यता के संबंध में विस्तृत रूप से निपटते हैं और एक समग्र तंत्र प्रस्तुत करते हैं। शपथ का

उल्लंघन शपथ लेने वाले व्यक्ति पर जताए गए विश्वास के साथ विश्वासघात हो सकता है जो मौलिक आचार संहिता को स्पष्ट रूप से इंगित और प्रदर्शित करता है। फिर भी शपथ के उल्लंघन को अयोग्यता मानने का मतलब संविधान के अनुच्छेद 191 में एक और खंड जोड़ना होगा जो स्पष्ट रूप से न तो वांछनीय है और न ही स्वीकार्य है। यह निश्चित रूप से हमारा कार्य नहीं है।

(पैरा 8 एवं 9)

संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत याचिका में प्रार्थना की गई है कि:-

(i) चौधरी भजन लाल, मुख्यमंत्री, हरियाणा (प्रतिवादी नंबर 1) को कृपया मुख्यमंत्री, हरियाणा के पद का अतिक्रमणकारी घोषित किया जाए और उन्हें हटाने के लिए अधिकार पृच्छा का रिट जारी करें: या

(ii) माननीय न्यायालय हित में उचित समझे जाने पर ऐसी राहत प्रदान की जा सकती है।

श्री एच.एस. हुडा और श्री रमेश हुडा ,याचिकाकर्ता की ओर से अधिवक्ता

श्री जे.के. सिब्बल और श्री संजीव शर्मा, प्रतिवादी संख्या 1 की ओर से अधिवक्ता

श्री एच.एल. सिब्बल, ए.जी. हरियाणा, सुश्री रूपिंदर दुलत, उत्तरदाताओं की ओर से अधिवक्ता

निर्णय

न्यायमूर्ति बी.सी. वर्मा,

(1) इस रिट याचिका में सवाल यह है कि क्या यह न्यायालय संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत अपने अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करते हुए एक मुख्यमंत्री के खिलाफ पद संभालने के समय

उन्हें दी गई शपथ का कथित रूप से उल्लंघन करने के लिए अधिकार पृच्छा का रिट जारी कर सकता है ?

(2) हरियाणा विधान सभा के सदस्य के रूप में विधिवत निर्वाचित होने के बाद, चौ. भजन लाल, प्रतिवादी नंबर 1, को संविधान के अनुच्छेद 164(1) के तहत शक्तियों का प्रयोग करते हुए राज्य के राज्यपाल द्वारा कानूनी रूप से हरियाणा राज्य के मुख्यमंत्री के रूप में नियुक्त किया गया था। इसी तरह अन्य मंत्रियों की नियुक्ति भी मुख्यमंत्री की सलाह पर की गई। याचिकाकर्ता, संसद के पूर्व सदस्य, हरद्वारी लाल ने इस रिट याचिका के माध्यम से चौधरी के खिलाफ कार्रवाई शुरू की है। भजन लाल ने इसे एक जनहित याचिका के रूप में वर्णित करते हुए "न्यायपालिका के माध्यम से लोगों के प्रति" एक लोलुप कार्यपालिका की "जवाबदेही के दायरे का प्रयोग" करने की हताशा में, प्रतिवादी को हटाने का निर्देश देते हुए यथास्थिति रिट जारी करने की प्रार्थना की। याचिकाकर्ता के अनुसार, प्रतिवादी नंबर 1 के कथित दुष्कर्मों का हवाला देते हुए कई आरोप लगाए गए हैं, जो स्पष्ट रूप से प्रदर्शित करते हैं कि मुख्यमंत्री ने अपने पद की शपथ का उल्लंघन किया है जो उन्होंने पद संभालने के समय ली थी। हमें उन आरोपों की सच्चाई या अन्यथा में जाने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि नोटिस के बाद, प्रतिवादी नंबर 1 ने, आरोपों का विरोध करने का अपना अधिकार सुरक्षित रखते हुए, केवल एक हलफनामा दाखिल करने का विकल्प चुना है, जिसमें दावा की गई राहत के लिए इस न्यायालय से संपर्क करने के याचिकाकर्ता के अधिकार पर सवाल उठाया गया है और उसे दी गई शपथ के कथित उल्लंघन के लिए अधिकार वारंट की रिट जारी करना इस न्यायालय का अधिकार क्षेत्र पर सवाल उठाया गया है। इसलिए, ऐसे आरोपों की सत्यता की जांच शुरू किए बिना, हम इस रिट याचिका की स्थिरता पर प्रारंभिक आपत्ति के रूप में उठाए गए कानूनी प्रश्न पर निर्णय लेने के लिए आगे बढ़ते हैं।

(3) इस सवाल पर कि क्या याचिकाकर्ता के पास दावा की गई राहत के लिए इस न्यायालय से संपर्क करने का अधिकार है, हमें ज्यादा हिरासत में लेने की जरूरत नहीं है। हालाँकि, प्रतिवादियों

की ओर से पेश हुए, हरियाणा के विद्वान महाधिवक्ता श्री सिब्बल ने इस रिट याचिका के पीछे के मकसद और उद्देश्य की कड़ी आलोचना की और इसे राजनीतिक बताया और इसका उद्देश्य केवल मुख्यमंत्री के राजनीतिक प्रतिद्वंद्वी द्वारा व्यक्तिगत शिकायतों को दूर करना था, फिर भी हमें ऐसा नहीं मिला। याचिकाकर्ता के न्यायालय में जाने के अधिकार पर गंभीरता से सवाल उठाया गया था। इस संबंध में प्रतिवादी के तर्क का सार यह है कि न्यायालय किसी ऐसे व्यक्ति के पक्ष में कोई विवेकाधिकार का प्रयोग नहीं करेगा जो केवल परोक्ष उद्देश्यों के साथ इस न्यायालय में आया है, जिसके पास प्रतिवादी के खिलाफ हमला करने के लिए अपनी कुल्हाड़ी है। इसलिए, जनहित याचिका की आड़ में न्यायालय तक पहुंच की अनुमति नहीं दी जा सकती। हमारा मानना है कि किसी व्यक्ति के पूर्ववृत्त या स्थिति का कोई महत्व नहीं रह जाता है यदि ऐसे व्यक्ति द्वारा भी न्यायालय को दी गई जानकारी ऐसी हो जिसके लिए न्यायालय को अपने अधिकार क्षेत्र का उपयोग करते हुए लोगों के अधिकारों और स्वतंत्रता की रक्षा के लिए आदेश और निर्देश पारित करने की उचित आवश्यकता हो। डी. सत्यनारायण बनाम एन. टी. रामा राव[1] में आंध्र प्रदेश उच्च न्यायालय की पूर्ण पीठ ने देखा कि राजनीतिज्ञ होना अपने आप में कोई पाप नहीं है। हमारी लोकतांत्रिक व्यवस्था में सरकारें जनता द्वारा वोट देकर सत्ता में आये राजनीतिक दलों द्वारा चलायी जाती हैं। राजनीतिक कार्यपालिका द्वारा संवैधानिक और वैधानिक उल्लंघनों की शिकायत करने वाली आम जनता की ओर से किसी राजनेता द्वारा न्यायालय में किसी भी तरह के समर्थन को राजनीति से प्रेरित साहसिक कार्य के रूप में वर्णित करना पूरी तरह से अवास्तविक है। यदि, हालांकि, हित व्यक्तिगत नहीं हैं और मुकदमेबाजी गैर-व्यक्तिगत लाभ के लिए प्रतीत होती है, तो अदालत में आने वाला व्यक्ति व्यस्त निकाय नहीं है और न ही हस्तक्षेप करने वाला है, राहत से इनकार नहीं किया जा सकता है और याचिका को यूं ही खारिज नहीं किया जा सकता है क्योंकि यह एक राजनेता द्वारा किया गया है। हालाँकि, हम याचिकाकर्ता की

1 ए आई आर 1988 आंध्र प्रदेश 144

इस न्यायालय में जाने की रुचि और मुख्यमंत्री के कृत्यों को न्यायालय के ध्यान में लाने के बारे में कोई और टिप्पणी किए बिना मामले को यहीं छोड़ देते हैं, जो उनके अनुसार कार्यालय में प्रतिवादी नंबर 1 के बने रहने के लायक नहीं हैं। हालाँकि, हम व्यक्त करते हैं कि व्यक्तिगत प्रकृति और राजनीतिक रूप से शरारती होने के द्वेषपूर्ण आरोपों को जनहित याचिका की आड़ में लगाने की अनुमति नहीं दी जा सकती है और न्यायालय को खुद को सावधान करना चाहिए कि उसे प्रक्रिया के दुरुपयोग से अपने अधिकार क्षेत्र, अधिकार और समय की रक्षा करनी चाहिए।

(4) पार्टियों के वकील ने पद संभालने के समय मुख्यमंत्री को दी गई शपथ के उल्लंघन के लिए उन्हें हटाने का निर्देश देने के लिए अधिकार -पत्र जारी करने के इस न्यायालय के अधिकार और क्षेत्राधिकार के सवाल पर अदालत को बहुत ही कुशलतापूर्वक और विस्तार से संबोधित किया। प्रतिवादियों की ओर से उपस्थित महाधिवक्ता ने तर्क दिया कि मुख्यमंत्री राज्यपाल की इच्छा पर पद धारण करते हैं जो उन्हें नियुक्त करते हैं, उनके द्वारा शपथ का उल्लंघन या उल्लंघन किसी भी अयोग्यता के समान नहीं है, यहां तक कि किसी भी स्थायी अयोग्यता के लिए उन्हें अपना पद छोड़ने की आवश्यकता नहीं है। और राजनीतिक होने के कारण अदालतें ऐसे मामलों पर निर्णय लेने के लिए सक्षम नहीं हैं। मुख्यमंत्री की योग्यताओं का निर्णय केवल नियुक्ति प्राधिकारी, अर्थात् राज्यपाल द्वारा किया जाता है । दूसरी ओर, याचिकाकर्ता के विद्वान वकील श्री हुडा ने बताया कि शपथ का उल्लंघन करके, मुख्यमंत्री संवैधानिक प्रावधान का उल्लंघन करते हैं और इसलिए, यह न्यायालय संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत क्षेत्राधिकार का प्रयोग करता है । उसे उस पद से हटाने का निर्देश देने का पूरा अधिकार है। विद्वान वकील ने कहा कि शपथ का ऐसा उल्लंघन अयोग्यता के समान है और एक बार ऐसी अयोग्यता हो जाने पर, पद संभालने वाले व्यक्ति, यानी मुख्यमंत्री को पद छोड़ना होगा और अदालत उसे ऐसा करने का निर्देश दे सकती है।

(5) संविधान का भाग VI अध्याय II "कार्यपालिका" से संबंधित है। राज्य की सभी कार्यकारी शक्तियाँ राज्यपाल में निहित हैं जो राष्ट्रपति द्वारा नियुक्त किया जाता है और राष्ट्रपति की मर्जी तक पद धारण करता है (अनुच्छेद 155 और 156)।

राज्यपाल के ऐसे कार्यालय में प्रवेश करने से पहले, उन्हें अनुच्छेद 159 के तहत दिए गए अनुसार शपथ या प्रतिज्ञान लेना होगा और उस पर हस्ताक्षर करना होगा। मुख्यमंत्री के नेतृत्व में एक मंत्रिपरिषद राज्यपाल को अपने कार्यों के अभ्यास में सहायता और सलाह देगी, सिवाय इसके कि "जहाँ तक संविधान द्वारा या उसके तहत उसे अपने कार्यों या उनमें से किसी का प्रयोग अपने विवेक से करना आवश्यक है।" (संविधान का अनुच्छेद 163)। अनुच्छेद 163 के खंड (3) के अनुसार मंत्रियों द्वारा राज्यपाल को दी गई सलाह, क्या कोई और यदि हां तो क्या, के प्रश्न की किसी भी न्यायालय में जांच नहीं की जाएगी। अनुच्छेद 164 मंत्रियों और मुख्यमंत्री की नियुक्ति से संबंधित है। अनुच्छेद 163 के उप-खंड (1) और (3) इस प्रकार हैं:

> “163. राज्यपाल को सहायता और सलाह देने के लिए मंत्रिपरिषद। -(1) राज्यपाल को उसके कार्यों के निष्पादन में सहायता और सलाह देने के लिए मुख्यमंत्री के नेतृत्व में एक मंत्रिपरिषद होगी, सिवाय इसके कि जहां तक वह इस संविधान के तहत या इसके तहत अपने कार्यों का निष्पादन करने के लिए आवश्यक है या उनमें से कोई भी अपने विवेक पर निर्भर करता है।
>
> (3) इस सवाल पर कि क्या मंत्रियों द्वारा राज्यपाल को कोई सलाह दी गई थी, और यदि हां तो क्या, किसी भी न्यायालय में पूछताछ नहीं की जाएगी।"

अनुच्छेद 164 के उप-खंड (1) और (3) इस प्रकार हैं:

1. मुख्यमंत्री की नियुक्ति राज्यपाल द्वारा की जाएगी और अन्य मंत्रियों की नियुक्ति राज्यपाल द्वारा मुख्यमंत्री की सलाह पर की जाएगी, और मंत्री राज्यपाल की इच्छानुसार पद धारण करेंगे: बशर्ते कि बिहार राज्य में मध्य प्रदेश और उड़ीसा में आदिवासी कल्याण का प्रभारी मंत्री होगा जो इसके अलावा अनुसूचित जाति और पिछड़े वर्गों के कल्याण या किसी अन्य कार्य का प्रभारी हो सकता है।

2. ***

3. किसी भी मंत्री के कार्यालय में प्रवेश करने से पहले, राज्यपाल ने उन्हें तीसरी सूची में इस उद्देश्य के लिए पद के अनुसार पद और राजनेता की शपथ दिलाई।

राज्य मंत्री के पद और गोपनीयता की शपथ के प्रपत्रों वाली तीसरी अनुसूची के आइटम V और VI को भी उद्धृत किया जा सकता है:

V

किसी राज्य के मंत्री के पद की शपथ का प्रपत्र:-

मैं, एबी, ईश्वर की शपथ लेता हूं और सत्यनिष्ठा से पुष्टि करता हूं कि मैं संविधान के प्रति सच्ची आस्था और निष्ठा रखूंगा। भारत के कानून के अनुसार यह स्थापित किया गया है कि मैं भारत की संप्रभुता और अखंडता को बरकरार रखूंगा, मैं राज्य के मंत्री के रूप में अपने कर्तव्यों का ईमानदारी और कर्तव्यनिष्ठा से निर्वहन करूंगा और मैं बिना किसी डर या पक्षपात, स्नेह या द्वेष के संविधान और कानून के अनुसार सभी प्रकार के लोगों का भला करेंगे।"

VI

किसी राज्य के मंत्री के लिए गोपनीयता की शपथ का प्रारूप:-

'मैं, एबी ईश्वर की शपथ लेता हूं और सत्यनिष्ठा से पुष्टि करता हूं कि मैं प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से, किसी भी व्यक्ति या व्यक्तियों को ऐसा कोई भी मामला नहीं बताऊंगा या प्रकट नहीं करूंगा जो मेरे विचाराधीन लाया जाएगा या राज्य के मंत्री के रूप में मुझे ज्ञात होगा। सिवाय इसके कि ऐसे मंत्री के रूप में मेरे कर्तव्यों के उचित निर्वहन के लिए आवश्यक हो।"

(6) संविधान के अनुच्छेद 190, 191 और 192 किसी राज्य के विधानमंडल के सदस्यों की अयोग्यता से संबंधित हैं। अनुच्छेद 191 में प्रावधान है कि किसी व्यक्ति को किसी राज्य की विधान सभा या विधान परिषद का सदस्य चुने जाने और सदस्य बनने के लिए अयोग्य ठहराया जाएगा: -

(a) यदि वह भारत सरकार या पहली अनुसूची में निर्दिष्ट किसी भी राज्य की सरकार के तहत लाभ का कोई पद धारण करता है, तो उस पद के अलावा जो राज्य के विधानमंडल द्वारा कानून द्वारा अपने धारक को अयोग्य घोषित नहीं करता है:

(b) यदि वह विकृत दिमाग का है और सक्षम न्यायालय द्वारा ऐसा घोषित किया गया है;

(c) यदि वह अनुन्मोचित दिवालिया है;

(d) यदि वह भारत का नागरिक नहीं है, या उसने स्वेच्छा से किसी विदेशी राज्य की नागरिकता प्राप्त कर ली है, या किसी विदेशी राज्य के प्रति निष्ठा या पालन की किसी स्वीकृत प्रतिज्ञा के अधीन है ;

(e) यदि वह संसद द्वारा बनाए गए किसी कानून द्वारा या उसके तहत अयोग्य घोषित किया गया है ।

स्पष्टीकरण.-i} खंड 1 के प्रयोजनों के लिए, किसी व्यक्ति को भारत सरकार या पहली अनुसूची में निर्दिष्ट किसी भी राज्य की सरकार के तहत केवल इस कारण से पद धारण करने का

अधिकार नहीं दिया जाएगा कि वह किसी भी राज्य का मंत्री है। संघ या ऐसे राज्य के लिए

।

कोई व्यक्ति किसी राज्य की विधान सभा या विधान परिषद का सदस्य होने के लिए अयोग्य हो जाएगा यदि वह दसवीं अनुसूची के तहत अयोग्य है। इस संदर्भ में अनुच्छेद 192 का भी महत्व है। इसमें प्रावधान है कि यदि कोई प्रश्न उठता है कि क्या किसी राज्य के विधानमंडल के किसी सदन का सदस्य अनुच्छेद 191 के खंड (1) में उल्लिखित किसी अयोग्यता के अधीन हो गया है, तो प्रश्न को राज्यपाल और उनके निर्णय के लिए भेजा जाएगा जो कीअंतिम होगा। हालाँकि, राज्यपाल ऐसा निर्णय देने से पहले चुनाव आयोग की राय लेंगे और ऐसी राय के अनुसार कार्य करेंगे।

(7) संविधान में उपरोक्त प्रावधान प्रकट होते हैं। –(i) कि मुख्यमंत्री की नियुक्ति राज्यपाल द्वारा होती है और वह और उसके मंत्री राज्यपाल की मर्जी तक पद धारण करते हैं; (ii) मंत्री/मुख्यमंत्री को पद की शपथ लेनी होगी; और (iii) जिन आधारों पर किसी व्यक्ति को किसी राज्य की विधान सभा या विधान परिषद के सदस्य के रूप में चुने जाने या होने के लिए अयोग्य ठहराया जाएगा, वे विशेष रूप से प्रदान किए जाते हैं और यदि किसी राज्य के विधानमंडल का कोई सदस्य किसी अयोग्यता के अधीन हो गया है तो विवाद/प्रश्न को राज्यपाल के निर्णय के लिए भेजा जाना चाहिए जिसका निर्णय अंतिम होगा।। उस स्थिति में भी वह चुनाव आयोग की राय लेगा और उस राय के अनुसार कार्य करेगा।

(8) संविधान के अनुच्छेद 191 और 192 विधान सभा के सदस्य की अयोग्यता के संबंध में विस्तृत रूप से **चर्चा** करते हैं और एक समग्र तंत्र प्रस्तुत करते हैं । यह ध्यान रखना महत्वपूर्ण है कि एक मंत्री के रूप में शपथ का उल्लंघन, वह शपथ जो वह कार्यालय में प्रवेश करने से पहले लेता है, न तो संविधान (अनुच्छेद 191) के तहत या यहां तक कि लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम सहित संसद द्वारा बनाए गए किसी अन्य कानून के तहत भी अयोग्यता नहीं है। शपथ का उल्लंघन शपथ लेने वाले व्यक्ति में जताए गए विश्वास के साथ विश्वासघात हो सकता है जो मौलिक आचार

संहिता को स्पष्ट रूप से इंगित और ध्वस्त करता है। फिर भी शपथ के उल्लंघन को अयोग्यता मानने का मतलब **संविधान** के अनुच्छेद 191 में एक और खंड जोड़ना होगा जो स्पष्ट रूप से न तो **वांछनीय है और न ही स्वीकार्य है।**

(9) यह भी ध्यान दिया जाना चाहिए कि शपथ का ऐसा उल्लंघन संविधान या किसी कानून के तहत किसी सदस्य के लिए स्थायी अयोग्यता या स्थायी विकलांगता नहीं है। यहां तक कि अनुच्छेद 191 के संदर्भ में भी अयोग्यता तभी तक है जब तक स्थितियां मौजूद हैं, उससे आगे नहीं। इस संबंध में कल्लारा सुकुमारन बनाम भारत संघ[2] मामले में केरल उच्च न्यायालय की डिवीजन बेंच के फैसले का संदर्भ उपयोगी हो सकता है। एक ऐसी स्थिति की सही कल्पना की गई थी जहां एक व्यक्ति एक अयोग्य व्यक्ति के रूप में एक कार्यालय में प्रवेश करता है और संविधान के अयोग्यता प्रावधानों के कार्यान्वयन द्वारा ऐसा करना जारी रखता है, जैसे कि उस मामले में जहां एक व्यक्ति राज्य के विधानमंडल का सदस्य हुए बिना मंत्री बन जाता है। उस स्थिति में वह छह महीने तक कार्य कर सकता है, उसके बाद यदि वह विधानसभा का सदस्य नहीं है तो वह मंत्री नहीं रहेगा। इसी प्रकार विधानसभा के सदस्य के रूप में विधिवत निर्वाचित कोई व्यक्ति बाद में अनुच्छेद 191 के तहत उल्लिखित किसी भी तरीके से अयोग्य हो सकता है। उस स्थिति में, उसकी मौजूदा सदस्यता समाप्त हो जाती है और विधान सभा के सदस्य के रूप में किसी व्यक्ति की आगे या आगे की पसंद के लिए एक बाधा के रूप में कार्य करती है। न्यायालय ने यह भी देखा कि संविधान के अनुच्छेद 191 के तहत निर्दिष्ट अयोग्यता के संबंध में निर्णय लेने का अधिकार राज्यपाल को है, जिन्हें अनुच्छेद 192 के तहत निर्दिष्ट तरीके से कार्य करना है। हम डिवीजन बेंच द्वारा लिए गए दृष्टिकोण से पूरी तरह सहमत हैं। ये प्रावधान दृढ़तापूर्वक सुझाव देते हैं कि संविधान अयोग्यता के प्रमुखों से विस्तृत रूप से निपटता है और प्रावधान करता है। हम डिवीजन बेंच के इस विचार से भी सहमत हैं कि अयोग्यता के दायरे का विस्तार करना या अयोग्यता के

2 ए.आई.आर. 1986 केरल 122

प्रमुखों को बढ़ाना अदालतों का काम नहीं है। जैसा उस मामले में था, वैसा ही यहां भी है, जैसा कि हमने ऊपर देखा है, विवाद यह है कि मुख्यमंत्री द्वारा शपथ का उल्लंघन (उस मामले में मंत्री द्वारा) अयोग्यता के रूप में कार्य करता है । इस विवाद को खारिज किया जाना चाहिए क्योंकि हमारी राय में यह संविधान के तहत प्रदान किए गए अयोग्यता के आधारों को जोड़ने के समान होगा। यह निश्चित रूप से हमारा कार्य नहीं है।

(10) यह सच है कि किसी पद या गोपनीयता की शपथ कोरी औपचारिकता नहीं होती। शपथ का संवैधानिक महत्व है। ऊपर उद्धृत शपथ का स्वरूप स्वयं ही इसमें शामिल मामलों की गंभीरता के बारे में बताता है। उनमें उच्च जुनून और नवीनता के शब्द हैं। शपथ सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक क्षेत्र तक फैली हुई है और शपथ लेने वाले व्यक्ति से संविधान और कानूनों को बनाए रखने और सभी के साथ न्याय करने की अपेक्षा की जाती है। ऐसी शपथ का उल्लंघन जटिल राजनीतिक प्रश्न खड़े कर सकता है। उनके साथ हल्के में व्यवहार नहीं किया जा सकता । इसके व्यापक दायरे को देखते हुए, शपथ का उल्लंघन या उल्लंघन कई मामलों में हो सकता है । फिर भी इसका कोई भी उल्लंघन अयोग्यता के दायरे में नहीं आ सकता जैसा कि कल्सेरा सुकुमारन के मामले (सुप्रा) में बताया गया है। किसी मंत्री/मुख्यमंत्री या विधानसभा के किसी सदस्य द्वारा किया गया कामकाज मुख्य रूप से राजनीतिक स्तर पर मूल्यांकन और निर्णय का विषय होगा। यह मूल्यांकन और निर्णय उस पार्टी द्वारा किया जाना चाहिए जिससे गलती करने वाला सदस्य संबंधित है या अंततः उन लोगों द्वारा किया जाना चाहिए जिनके प्रति वह अंततः जवाबदेह है। जैसा कि पी. गुप्ता बनाम भारत के राष्ट्रपति[3] में बताया गया है , यदि शपथ का कोई उल्लंघन होता है तो न्यायालयों को जांच शुरू करने की आवश्यकता नहीं है। मुख्यमंत्री के मामले में राज्यपाल के पास निश्चित रूप से अनुच्छेद 192 के तहत हस्तक्षेप करने और सुलह या सुधार लाने की शक्ति है । किसी राज्य के मुख्यमंत्री या राज्यपाल की इस संबंध में विफलता पर संविधान के

3 ए.आई.आर. 1982 एससी 149

अनुच्छेद 356 के तहत राष्ट्रपति की कार्रवाई हो सकती है, क्योंकि वे इस बात से संतुष्ट हैं कि राज्य में संवैधानिक तंत्र टूट गया है। डिवीजन बेंच ने कहा कि एक अयोग्य व्यक्ति की मंत्री के रूप में बने रहने की नैतिकता या औचित्य अनिवार्य रूप से एक राजनीतिक प्रश्न है, जिसे शुरू में राजनीतिक स्तर पर किसी भी दर पर प्रमुखता से निपटाया जाना चाहिए। न्यायमूर्ति फ्रैंकफर्टर ने चार्ल्स डब्ल्यू बेकर बनाम जो. सी. कैर. (1962)[4], पृष्ठ 716 पर सशक्त रूप से इस प्रकार व्यक्त किया गया है: -

> "11. हमारे संविधान के तहत हर राजनीतिक शरारत के लिए कोई न्यायिक उपाय नहीं है
> "
>
> (11) हम डिवीजन बेंच को उद्धृत करने के लिए प्रलोभित हैं, - "मंत्रियों और मंत्रालयों के साथ प्रयोग एक विकासशील लोकतंत्र के लिए एक आवश्यक अगली कड़ी है। और जहां तक मंत्रालयों की बात है तो उनके पालने और ताबूतों की निरंतर प्रक्रिया से कोई विशेष रूप से परेशान नहीं हो सकता है।"

राष्ट्र के भविष्य की सुरक्षा के लिए एक नागरिक की आवश्यकता की सराहना करते हुए, डिवीजन बेंच ने ऐसे मामलों से निपटने के लिए सशक्त संवैधानिक पदाधिकारियों पर भरोसा जताया और कहा कि यदि अवसर आया तो वे संविधान और कानूनों के तहत अपने कर्तव्यों से पीछे नहीं हटेंगे।

(12)यह भी देखा जा सकता है कि सदस्यता से अयोग्यता के परिणाम अनुच्छेद 193 में उल्लिखित हैं। यदि उसे अनुच्छेद 191 में उल्लिखित आधारों पर सदस्यता से अयोग्य ठहराया जाता है, और यदि वह अभी भी विधान सभा या विधान सभा के सदस्य के रूप में बैठता है या मतदान करता है अनुच्छेद 188 के प्रावधानों का अनुपालन करने से पहले राज्य की परिषद, उसे

---

4 (1962) 369 यूएस 186:7 एलईडी 2डी 663

अनुच्छेद 193 में उल्लिखित दंड के साथ दौरा किया जाता है। यह महत्वपूर्ण है कि संविधान किसी व्यक्ति द्वारा शपथ के उल्लंघन के परिणामों के बारे में कोई स्पष्ट प्रावधान नहीं करता है। मंत्री. उस स्थिति में, जैसा कि हमने ऊपर उल्लेख किया है, अपनाया जाने वाला एकमात्र रास्ता संविधान के अनुच्छेद 192 के तहत दर्शाया गया है।

(13) उपरोक्त कारणों से, हमारी राय है कि प्रतिवादी मुख्यमंत्री द्वारा शपथ का कथित उल्लंघन/उल्लंघन, जो निर्धारित शपथ लेने पर उस मंत्री पद पर रहने के लिए योग्य था, ने उसे मुख्य पद पर बने रहने के लिए अयोग्य नहीं ठहराया है।

(14) मामले को एक और नजरिये से भी देखा जा सकता है । हमने देखा है कि राज्यपाल ही मुख्यमंत्री की नियुक्ति करता है, जो राज्यपाल की मर्जी तक पद पर रहता है और अपने पद पर प्रवेश करने से पहले, मुख्यमंत्री को पद और गोपनीयता की शपथ लेनी होती है, जिसकी शपथ राज्यपाल उसे दिलाते हैं। संविधान सभा की बहस के दौरान, डॉ. अम्बेडकर ने अपने भाषण में इस प्रावधान पर चर्चा करते हुए कहा कि निस्संदेह, मंत्रालय को ऐसे समय में पद पर बने रहना है जब तक उसे बहुमत का विश्वास प्राप्त हो। संविधान को इसी सिद्धांत पर काम करना है। फिर भी, प्रावधान को उस तरह से काम न करने का जो कारण बताया गया है, उसे डॉ. अम्बेडकर ने इन शब्दों में बताया है, -

> "हमने इसे इतना स्पष्ट रूप से क्यों नहीं कहा है इसका कारण यह है कि इसे किसी भी संविधान में उस तरह से या उन शब्दों में नहीं कहा गया है जो 'सुख के दौरान' सरकार की एक संसदीय प्रणाली निर्धारित करता है, इसका हमेशा यह मतलब निकाला जाता है कि इस तथ्य के बावजूद कि मंत्रालय ने बहुमत का विश्वास खो दिया है , 'खुशी' जारी नहीं रहेगी । जिस क्षण मंत्रालय ने बहुमत का विश्वास खो दिया है, यह माना जाता है कि

राष्ट्रपति मंत्रालय को बर्खास्त करने में अपनी 'खुशी' का प्रयोग करेंगे और इसलिए मैं जो कह सकता हूं, सभी जिम्मेदार सरकारों में उपयोग की जाने वाली रूढ़िबद्ध वाक्यांशविज्ञान से भिन्न होना अनावश्यक है। "

(संविधान सभा वाद-विवाद खंड 8, पृष्ठ 520) केसी चैतंडी बनाम आर. बालकृष्ण पिल्लई[5] में, केरल उच्च न्यायालय की पूर्ण पीठ ने भी यह विचार रखा कि नियुक्ति प्राधिकारी राज्यपाल होने के नाते, वह ही हैं जो इस बात पर विचार कर सके कि क्या वास्तव में शपथ का कोई उल्लंघन हुआ था। किसी मंत्री का कार्यकाल समाप्त करना न्यायालय का कार्य नहीं है। पूर्ण पीठ ने कल्लारा सुकुमारन (सुप्रा) के मामले में उस न्यायालय के पहले के डिवीजन बेंच के फैसले पर भी गौर किया और यह माना गया कि एक मंत्री के समय और कार्यालय पर लागू आनंद सिद्धांत के कारण, कार्यालय मुख्य मंत्री या राज्यपाल के निपटान में रखा गया था। मामले को और स्पष्ट करते हुए, कल्लारा सुकुमारन बनाम भारत संघ[6] मामले में उस न्यायालय की एक अन्य खंडपीठ ने कहा कि राज्यपाल/मुख्यमंत्री को जो प्रदत्त है वह एक विवेक है, न कि कर्तव्य के साथ जुड़ी शक्ति। नियुक्ति प्राधिकारी का कोई कर्तव्य या कार्य नहीं है। स्थिति पर जिस ढंग से वह उचित समझे उस पर प्रतिक्रिया करना उसके पास स्वतंत्र विवेक है, लेकिन डोमेन आनंद और विवेक का होने के कारण किसी भी न्यायिक हस्तक्षेप की कोई गुंजाइश नहीं है । संविधान सभा वाद-विवाद खंड 7, पृष्ठ 1159 से 1160 को विस्तार से उद्धृत करने के बाद , न्यायालय के लिए निर्णय देने वाले विद्वान मुख्य न्यायाधीश ने कहा कि ऐसा प्रतीत होता है कि संविधान के संस्थापकों का इरादा ऐसे मामलों को अच्छे लोगों पर छोड़ने का था। मुख्यमंत्री (इस मामले में, राज्यपाल) की समझ और विधायिका की अच्छी समझ के साथ-साथ आम जनता की निगरानी भी। आगे यह देखा गया कि कानून द्वारा इस निर्देश के अभाव में कि शपथ का उल्लंघन करने पर पद की ज़ब्ती हो जाएगी, राज्यपाल और/या मुख्यमंत्री या तो मंत्री को

5 ए.आई.आर. 1986 केरल 116

6 ए.आई.आर. 1987 केरल 212

हटा सकते हैं या स्थिति के अनुसार अपने विवेक के अनुसार ऐसी अन्य कार्रवाई कर सकते हैं। इसके अंतिम विश्लेषण में यह माना गया, -

> "वस्तुनिष्ठ मानदंडों पर संतुष्टि के आधार पर निर्णय लेने की आवश्यकता नहीं है। जो मामले पूरी तरह से नियुक्ति प्राधिकारी के आनंद और निरंकुश विवेक के दायरे में हैं, वे संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत उच्च न्यायालय के अधिकार क्षेत्र में नहीं आते हैं। "

केरल उच्च न्यायालय का यह दृष्टिकोण मद्रास उच्च न्यायालय द्वारा भी रामचन्द्रन बनाम एमजी रामचन्द्रन[7], और डी. सत्यनारायण बनाम एनटी रामा राव[8]में साझा किया गया है। हम बिना किसी हिचकिचाहट के उपरोक्त तीन उच्च न्यायालयों द्वारा व्यक्त किए गए विचार से सहमत हैं। हम यह भी जोड़ सकते हैं कि किसी अन्य न्यायालय का कोई भी निर्णय विपरीत दृष्टिकोण रखते हुए हमारे समक्ष नहीं रखा गया।

(15) जैसा कि हमारे विचार से यह निष्कर्ष निकलता है कि यह न्यायालय शपथ का उल्लंघन करने के लिए मुख्यमंत्री को हटाने के लिए अधिकार वारंट या किसी अन्य प्रकार की रिट या निर्देश जारी करने में सक्षम नहीं है। अब यह अच्छी तरह से तय हो गया है कि जब कोई पद या कार्यालय आनंद के लिए होता है तो कोई अधिकार-पत्र जारी नहीं किया जा सकता है। एक बार जब कोई व्यक्ति किसी पद पर वैध रूप से प्रवेश करता है और कानूनी रूप से उसे धारण करने का हकदार होता है और उसकी निरंतरता आनंद सिद्धांत पर निर्भर करती है, तो यथा वारंटो की प्रकृति में सूचना के माध्यम से रिट जारी करना स्वीकार्य नहीं होगा।

इसका कारण यह है कि इस तरह के रिट को कार्यपालिका की इच्छा से तुरंत और आसानी से पराजित किया जा सकता है क्योंकि वह ऐसे व्यक्ति को फिर से उस कार्यालय को संभालने की अनुमति देने

---

7 ए.आई.आर. 1987 मद्रास 207

8 ए.आई.आर. 1988 आंध्र प्रदेश 62

के लिए खुला होगा। केसी चांडी के मामले *(सुप्रा)* में केरल उच्च न्यायालय की पूर्ण पीठ ने डार्ले बनाम द क्वीन[9] का एक अंश इस प्रकार उद्धृत किया: -

> यथा वारंटो की प्रकृति में सूचना द्वारा यह कार्यवाही एक कार्यालय को हड़पने के लिए होगी, चाहे वह अकेले चार्टर द्वारा बनाया गया हो, या क्राउन द्वारा, संसद की सहमति से, बशर्ते कि कार्यालय सार्वजनिक प्रकृति का हो, और एक वास्तविक कार्यालय हो, न कि केवल किसी डिप्टी या नौकर का कार्य या रोजगार दूसरों की इच्छा और खुशी पर आयोजित किया जाता है, क्योंकि ऐसे रोजगार के संबंध में, न्यायालय निश्चित रूप से हस्तक्षेप नहीं करेगा और जानकारी उचित रूप से झूठ नहीं होगी।

डी. सत्यनारायण रामचंद्रन के मामले *(सुप्रा)* में आंध्र प्रदेश उच्च न्यायालय की पूर्ण पीठ ने कहा कि राज्यपाल को तब तक पद पर बने रहना सहन करना पड़ सकता है, जब तक मुख्यमंत्री को विधानसभा के सदस्यों में बहुमत का विश्वास हासिल है , जब तक कि निश्चित रूप से, वह उस पद को धारण करने के लिए किसी भी अयोग्यता से ग्रस्त न हो। चूंकि मंत्री के कार्यकाल को समाप्त करने की शक्ति राज्यपाल में निहित है, इसलिए अदालतों के लिए असीमित क्षेत्राधिकार ग्रहण करना उचित नहीं होगा क्योंकि इससे कार्यात्मक अराजकता की स्थिति पैदा हो सकती है जिसे व्यापक सार्वजनिक हित में टाला जाना चाहिए। एक मुख्यमंत्री मतदाताओं के प्रति जवाबदेह होता है जो निर्वाचित प्रतिनिधियों के गलत प्रदर्शन और कुशासन को रोकने के लिए निगरानी रखता है। हम यह कहने के लिए पूर्ण पीठ को उद्धृत कर सकते हैं, -

> "इस न्यायालय से कोई अनावश्यक सलाह, यहां तक कि कोई विशिष्ट निर्देश, आवश्यक नहीं है।"

---

9 12 सीएल एवं एफ. 520 (537)

तब न्यायालय ने निर्णय के पैराग्राफ 14 में निश्चित दृष्टिकोण व्यक्त किया कि लगाए गए आरोपों के गुण चाहे जो भी हों, यदि और जब उचित पाया जाए, तो अनुच्छेद 164(1) के तहत मुख्यमंत्री के पद का कार्यकाल समाप्त करने की शक्ति पूरी तरह से राज्यपाल में निहित है। संविधान के अनुसार, न्यायालय की ओर से कोई भी अधिकार- पत्र जारी नहीं किया जाएगा। हमारे पास अलग दृष्टिकोण अपनाने का कोई कारण नहीं है, न ही हमें सफलतापूर्वक अलग होने के लिए राजी किया जा सका।

(16) इसलिए, हमारा निष्कर्ष यह है कि मुख्यमंत्री को दी गई शपथ का उल्लंघन करने मात्र से वह उस पद पर बने रहने के लिए अयोग्य नहीं हो जाते, जिस पद पर वह सरकार की मर्जी से हैं। यथास्थिति की प्रकृति में कोई रिट जारी नहीं की जा सकती है । ऐसी शपथ के उल्लंघन के लिए और इस न्यायालय के पास संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत उस कारण से मुख्यमंत्री को हटाने के लिए कोई निर्देश जारी करने का कोई अधिकार क्षेत्र नहीं है। मामले को देखते हुए इस रिट याचिका को खारिज किया जाना चाहिए।

(17) इस मामले से अलग होने से पहले, हम यह स्पष्ट कर सकते हैं कि हम इस धारणा पर आगे बढ़े हैं कि प्रतिवादी नंबर 1, यानी हरियाणा राज्य के मुख्यमंत्री, शपथ का उल्लंघन करने के दोषी हैं। हम यह स्पष्ट करते हैं कि मुख्यमंत्री ने केवल प्रार्थना के अनुसार रिट जारी करने के न्यायालय के अधिकार क्षेत्र को चुनौती दी है। यदि ऐसा कोई अवसर आता है तो प्रतिवादी नंबर 1 के खिलाफ लगाए गए आरोपों को गुण-दोष के आधार पर चुनौती देने का अधिकार सुरक्षित रखा गया है। इसलिए, यह नहीं माना जाना चाहिए कि रिट याचिका में प्रतिकूल आरोपों को प्रतिवादी द्वारा स्वीकार किया गया था।

(18) प्रतिवादियों की ओर से उपस्थित विद्वान महाधिवक्ता, हरियाणा ने स्पष्ट रूप से इस याचिका को खारिज करने की स्थिति में याचिकाकर्ता पर भारी जुर्माना लगाने के लिए दबाव डाला ताकि अदालत में इस तरह के आरोप लगाने से रोका जा सके। चूँकि, हमारी राय में, हमने जो दृष्टिकोण

अपनाया है, उसमें लगाए गए आरोपों की सच्चाई या अन्यथा की जाँच करना इस न्यायालय के लिए आवश्यक नहीं है, इसलिए हमारे लिए यह कहना जल्दबाजी होगी कि वे आरोप केवल कुछ व्यक्तिगत कारणों, राजनीतिक लाभ या कोई परोक्ष उद्देश्य से लगाए गए हैं। इसलिए, हम पार्टियों पर इस रिट याचिका की लागत स्वयं वहन करने का दायित्व छोड़ते हैं।

(19) रिट याचिका खारिज कर दी गई है, लेकिन **लागत के बारे में कोई आदेश दिए बिना।**

जे.एस.टी.

अस्वीकरण : स्थानीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के सीमित उपयोग के लिए है ताकि वह अपनी भाषा में इसे समझ सके और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यवहारिक और आधिकारिक उद्देश्यो के लिए निर्णय का अँग्रेजी संस्करण प्रमाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य के लिए उपयुक्त रहेगा ।

Checked By:

Ravleen Kaur

Trainee Judicial Officer

Chandigarh Judicial Academy,

Chandigarh